

पथ के दावेदार

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय



उपन्यास

पथ के दावेदार

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय

पथ के दावेदार

अध्याय 1

अपूर्व के मित्र मजाक करते, "तुमने एम. एस-सी. पास कर लिया, लेकिन तुम्हारे सिर पर इतनी लम्बी चोटी है। क्या चोटी के द्वारा दिमाग में बिजली की तरंगें आती जाती रहती हैं?"

अपूर्व उत्तर देता, "एम. एस-सी. की किताबों में चोटी के विरुद्ध तो कुछ लिखा नहीं मिलता। फिर बिजली की तरंगों के संचार के इतिहास का तो अभी आरम्भ ही नहीं हुआ है। विश्वास न हो तो एम. एस-सी. पढ़ने वालों से पूछकर देख लो।" मित्र कहते, "तुम्हारे साथ तर्क करना बेकार है।" अपूर्व हंसकर कहता, "यह बात सच है, फिर भी तुम्हें अकल नहीं आती।" अपूर्व सिर पर चोटी रखे, कॉलेज में छात्रवृत्ति और मेडल प्राप्त करके परीक्षाएं भी पास करता रहा और घर में एकादशी आदि व्रत और संध्या-पूजा आदि नित्य-कर्म भी करता रहा। खेल के मैदानों में फुटबाल, क्रिकेट, हॉकी आदि खेलने में उसको जितना उत्साह था प्रातःकाल मां के साथ गंगा स्नान करने में भी उससे कुछ कम नहीं था। उसकी संध्या-पूजा देखकर भौजाइयां भी मजाक करतीं, बबुआ जी पढ़ाई-लिखाई तो समाप्त हुई, अब चिमटा, कमंडल लेकर संन्यासी हो जाओ। तुम तो विधवा ब्राह्मणी से भी आगे बढ़े जा रहे हो।" अपूर्व हंसकर कहता, "आगे बढ़ जाना आसान नहीं है भाभी! माता जी के पास कोई बेटी नहीं है। उनकी उम्र भी काफी हो चुकी है। अगर बीमार पड़ जाएंगी तो पवित्र भोजन बनाकर तो खिला सकूंगा। रही चिमटा, कमंडल की बात, सो वह तो कहीं गया नहीं?"

अपूर्व मां के पास जाकर कहता, "मां! यह तुम्हारा अन्याय है। भाई जो चाहें करें लेकिन भाभियां तो मुर्गा नहीं खातीं। क्या तुम हमेशा अपने हाथ से ही भोजन बनाकर

खाओगी?"

मां कहती, "एक जून एक मुट्ठी चावल उबाल लेने में मुझे कोई तकलीफ नहीं होती। और जब हाथ-पांव काम नहीं करेंगे तब तक मेरी बहू घर में आ जाएगी।" अपूर्व कहता, "तो फिर एक ब्राह्मण पंडित के घर से बहू, मंगवा क्यों नहीं देतीं? उसे खिलाने की सामर्थ्य मुझमें नहीं है-लेकिन तुम्हारा कष्ट देखकर सोचता हूं कि चलो भाइयों के सिर पर भार बनकर रह लूंगा।" मां कहती, "ऐसी बात मत कह रे अपूर्व, एक बहू क्या, तू चाहे तो घर भर को बिठाकर खिला सकता है।"

"कहती क्या हो मां? तुम सोचती हो कि भारतवर्ष में तुम्हारे पुत्र जैसा और कोई है ही नहीं?"

और यह कहकर वह तेजी से चला जाता। अपूर्व के विवाह के लिए लोग बड़े भाई विनोद को आकर परेशान करते। विनोद ने जाकर मां से कहा, "मां, कौन-सी निष्ठावान जप-तपवाली लड़की है, उसके साथ अपने बेटे का ब्याह करके किस्सा खत्म करो। नहीं तो मुझे घर छोड़कर भाग जाना पड़ेगा। बड़ा होने के कारण लोग समझते हैं कि घर का बड़ा-बूढ़ा मैं ही हूं।" पुत्र के इन वाक्यों से करुणामयी अधीर हो उठी। लेकिन बिना विचलित हुए मधुर स्वर में बोली, "लोग ठीक ही समझते हैं बेटा। उनके बाद तुम ही तो घर के मालिक हो। लेकिन अपूर्व के संबंध में किसी को वचन मत देना। मुझे रूप और धन की आवश्यकता नहीं है। मैं स्वयं देख-सुनकर तय करूंगी।" "अच्छी बात है मां। लेकिन जो कुछ करो, दया करके जल्दी कर डालो," कहकर विनोद रूठकर चला गया।

स्नान घाट पर एक अत्यंत सुलक्षणा कन्या पर कई दिन से करुणामयी की नजर पड़ रही थी। वह अपनी मां के साथ गंगा-स्नान करने आती थी। उन्हीं की जाति की है, गुप्त रूप से वह पता लगा चुकी थीं। उनकी इच्छा थी कि अगर तय हो जाए तो आगामी बैसाख में ही विवाह कर डालें।

तभी अपूर्व ने आकर एक अच्छी नौकरी की सूचना दी।
मां प्रसन्न होकर बोली, "अभी उस दिन तो पास हुआ है। इसी बीच तुझे नौकरी किसने
दे डाली?"

अपूर्व हंसकर बोला, "जिसे जरूरत थी।" यह कहकर उसने सारी घटना विस्तार से
बताई कि उसके प्रिंसिपल साहब ने ही उसके लिए यह नौकरी ठीक की है। वोथा
कम्पनी ने बर्मा के रंगून शहर में एक नया कार्यालय खोला है। वह किसी सुशिक्षित
और ईमानदार बंगाली युवक को उस कार्यालय का सारा उत्तरदायित्व देकर भेजना
चाहती है। रहने के लिए मकान और चार-सौ रुपए माहवार वेतन मिलेगा और छः
महीने के बाद वेतन में दौ सौ रुपए की वृद्धि कर दी जाएगी।"
बर्मा का नाम सुनते ही मां का मुंह सूख गया, बोली, "पागल तो नहीं हो गया? तुझे
वहां भेजूंगी? मुझे ऐसे रुपए की जरूरत नहीं है।"
अपूर्व भयभीत होकर बोला, "तुम्हें न सही, मुझे तो है। तुम्हारी आज्ञा से भीख मांगकर
भी जिंदगी बिता सकता हूं लेकिन जीवन भर ऐसा सुयोग फिर नहीं मिलेगा। तुम्हारे बेटे
के न जाने से वोथा कम्पनी का काम रुकेगा नहीं। लेकिन प्रिंसिपल साहब मेरी ओर से
वचन दे चुके हैं। उनकी लज्जा की सीमा न रहेगी। फिर घर की हालत तो तुमसे छिपी
नहीं है मां।"

"लेकिन सुनती हूं वह म्लेच्छों का देश है।"
अपूर्व ने कहा, "किसी ने झूठ-मूठ कह दिया है। तुम्हारा देश तो म्लेच्छों का देश नहीं
है। फिर भी जो मनमानी करना चाहते हैं उन्हें कोई रोक नहीं सकता।"
"मैंने तो इसी बैसाख में तेरा विवाह करने का निश्चय किया है।"
अपूर्व बोला, "एकदम निश्चय? अच्छी बात है। एक दो महीने बाद जब तुम बुलाओगी,
मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करने आ जाऊंगा।"
करुणामयी बाहर से देखने में पुराने विचारों की अवश्य थी लेकिन बहुत ही बुद्धिमती
थी। कुछ देर मौन रहकर बोली, "जब जाना ही है तो अपने भाइयों की सहमति भी ले
लेना।"

यह कुल गोकुल दीधी के सुप्रसिद्ध बंद्योपाध्याय घराने में से है। वंश-परम्परा से ही वह लोग अत्यंत आचार परायण कहलाते हैं। बचपन से जो संस्कार उनके मन में जग गए थे-पति, पुत्रों ने जहां तक लांछित और अपमानित करना था किया, लेकिन अपूर्व के कारण वह सब कुछ सहन करती हुई इस घर में रह रही थी। आज वह भी उनकी आंखों से दूर अनजाने देश जा रहा है। इस बात को सोच-सोचकर उनके भय की सीमा नहीं रही। बोली, "अपूर्व मैं जितने दिन जीवित रहूं, मुझे दुःख मत देना बेटे," कहते-कहते उनकी आंखों से दो बूंद आंसू टपक पड़े। अपूर्व की आंखें भी गीली हो उठीं। बोला, "मां, आज तुम इस लोक में हो लेकिन एक दिन जब स्वर्गवास की पुकार आएगी, उस दिन तुम्हें अपने अपूर्व को छोड़कर वहां जाना होगा। मेरे जाने के बाद तुम यहां बैठकर मेरे लिए आंसू मत बहाती रहना", इतना कहकर वह दूसरी ओर चला गया। उस दिन सांझ के समय, करुणामयी अपनी नियमित संध्या-पूजा आदि कार्यों में मन नहीं लगा सकीं। अपने बड़े बेटे के कमरे के दरवाजे पर चली गईं। विनोद कचहरी से लौटकर जलपान करने के बाद क्लब जाने की तैयारी कर रहा था। मां को देखकर एकदम चौंक पड़ा। करुणामयी ने कहा, "एक बात पूछने आई हूं, विनू!" "कौन-सी बात मां?" यहां आने से पहले मां अपनी आंखों के आंसू अच्छी तरह पोंछकर आई थी, लेकिन उनका रुंधा गला छिपा न रह सका। सारी घटना और अपूर्व के मासिक वेतन के बारे में बताने के बाद उन्होंने चिंतित स्वर में पूछा, "यही सोच रही हूं बेटा कि इन रुपयों के लोभ में उसे भेजू या नहीं।" विनोद धीरज खो बैठा। शुष्क स्वर में बोला, "मां, तुम्हारे अपूर्व जैसा लड़का भारतवर्ष में और दूसरा नहीं है। इस बात को हम सभी मानते हैं। लेकिन इस धरती पर रहकर इस बात को माने बिना भी नहीं रह सकते कि पहले चार सौ रुपए, फिर छः महीने में दो सौ रुपए और-वह इस लड़के से बहुत बड़ा है।"

मां दुःखी होकर बोली, "लेकिन सुनती हूं कि वह तो एकदम म्लेच्छों का देश है।" विनोद ने कहा, "तुम्हारा जानना-सुनना ही तो सारे संसार का अन्तिम सत्य नहीं हो सकता।"

पुत्र के अन्तिम वाक्य से मां अत्यंत दुःखी होकर बोली, "बेटा! जब से समझदार हुई, इसी एक ही बात को सुन-सुनकर भी जब मुझे चेत नहीं हुआ तो इस उम्र में और शिक्षा मत दो। मैं यह जानने नहीं आई कि अपूर्व का मूल्य कितने रुपए है। मैं केवल यह जानने आई थी कि उसे इतनी दूर भेजना उचित होगा या नहीं।" विनोद ने दाएं हाथ से मां के चरणस्पर्श करके कहा, "मां, मैंने तुम्हें दुःखी करने के लिए यह नहीं कहा। यह सच है कि पिता जी के साथ ही हम लोगों का मेल बैठता था और उनसे हम लोगों ने सीखा है कि घर-गृहस्थी के लिए रुपया होना कितना आवश्यक है। इस हैट कोट को पहनकर विनू इतना बड़ा साहब नहीं बन गया कि छोटे भाई को खिलाने के डर से उचित-अनुचित का विचार न कर सके। लेकिन फिर भी कहता हूं कि उसे जाने दो। देश में जैसी हवा बह रही है इससे वह कुछ दिनों के लिए देश छोड़कर, कहीं दूसरी जगह जाकर काम में लग जाए तो इसमें उसका भी हित होगा और परिवार की रक्षा भी हो जाएगी। तुम तो जानती हो मां, उस स्वदेशी आंदोलन के समय कितना छोटा था। फिर भी उसी के प्रताप से पिता जी की नौकरी जाने की नौबत आ गई थी।" करुणामयी बोली, "नहीं, नहीं, अब अपूर्व वह सब नहीं कर सकता।" विनोद बोला, "मां, सभी देशों में कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनकी जाति ही अलग होती है। अपूर्व उसी जाति का है। देश की मिट्टी ही इसके शरीर का मांस है, देश का जल ही इनकी धमनियों का रक्त है। देश के विषय में इनका विश्वास कभी मत करना मां, नहीं तो धोखा खाओगी। बल्कि अपने इस म्लेच्छ विनू को, अपने उस चोटीधारी, गीता पढ़े एम. एस.सी. पास अपूर्व से अधिक ही अपना समझना।" पुत्र की इन बातों पर मां ने विश्वास तो नहीं किया लेकिन मन-ही-मन शंकित हो उठी। देश के पश्चिमी क्षितिज पर जो भयानक मेघ के लक्षण प्रकट हुए हैं, उसे वह जानती थी। याद आया कि उस समय तो अपूर्व के पिता जीवित थे, लेकिन अब नहीं हैं।

विनोद ने मां के मन की बात जान ली। लेकिन क्लब जाने की जल्दी में बोला, "अच्छा मां, वह कल ही तो जा नहीं रहा। सब लोग बैठकर जो निश्चय करेंगे, कर लेंगे," कहकर तेजी से बाहर निकल गया। अपने ब्राह्मणत्व की बड़ी सतर्कता से रक्षा करते हुए अपूर्व एक जलयान द्वारा रंगून के घाट पर पहुंच गया। वोथा कम्पनी के एक दरबान और एक मद्रासी कर्मचारी ने अपने इस नए मैनेजर का स्वागत किया। तीस रुपए महीने का एक कमरा ऑफिस के खर्चे से यथासम्भव सजा हुआ तैयार है, यह समाचार देने में उन लोगों ने देर नहीं की। समुद्र-यात्रा की झंझटों के बाद वह खूब हाथ-पैर फैलाकर सोना चाहता था। ब्राह्मण साथ था। घर में अत्यंत असुविधा होते हुए भी इस भरोसे के आदमी को साथ भेजकर मां को बहुत कुछ तसल्ली मिल गई थी। केवल ब्राह्मण रसोइया ही नहीं बल्कि भोजन बनाने के लिए कुछ चावल, दाल, घी, तेल पिसा हुआ मसाला यहां तक कि आलू, परवल तक वह साथ देना नहीं भूली थीं। गाड़ी आ जाने पर मद्रासी कर्मचारी तो चले गए लेकिन रास्ता दिखाने के लिए दरबान साथ चल दिया। दस मिनट में ही गाड़ी जब मकान के सामने पहुंचकर रुकी तो तीस रुपए किराए के मकान को देखकर अपूर्व हतबुद्धि-सा खड़ा रह गया। मकान बहुत ही भद्दा है। छत नहीं है। सदर दरवाजा नहीं है। आंगन समझो या जो कुछ, इस आने-जाने के रास्ते के अलावा और कहीं तनिक भी स्थान नहीं है। एक संकरी काठ की सीढ़ी, रास्ते के छोर से आरम्भ होकर सीधी तीसरी मंजिल पर चली गई है। इस पर चढ़ने-उतरने में कहीं अचानक पैर फिसल जाए तो पहले पत्थर के बने राजपथ पर फिर अस्पताल में और फिर तीसरी स्थिति को न सोचना अच्छा है। नया आदमी है इसलिए हर कदम बड़ी सावधानी से रखते हुए दरबान के पीछे-पीछे चलने लगा। दरबान ने ऊपर चढ़ने के बाद दाईं ओर में दो मंजिले के एक दरवाजे को खोलकर बताया।

"साहब, यही आपके रहने का कमरा है।" दाईं ओर इशारा करके अपूर्व ने पूछा, "इसमें कौन रहता है?"